बच्चों की प्रथम शिक्षिका माता की उपस्थिति तथा अनुपस्थिति : विश्लेषण

अखिलेश कुमार उपाध्याय

शोध छात्र

शिक्षा संकाय, कुमाऊँ विश्वविद्याालय,

नैनीताल

प्रसिद्ध पाश्चात्य अनुभववादी दर्शन के प्रणेता तथा अनुभववादी विचारक जॉन लॉक ने मानव मस्तिष्क को जन्म के समय सादा, खाली तथा कोरी पटिया माना है। उन्होंने अपने विचारों को निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया है।

" जन्म के समय हमारा मन कोरे काागज, अन्धेरे कमरे, साफ स्लेट के समान होता है। इस पर कुछ भी अंकित नहीं रहता है।"

– जॉन लॉक

लॉक के अनुसार मनुष्य जैसे–जैसे बड़ा होता है वैसे–वैसे उसके द्वारा प्राप्त संवेदनायें उसके मानसिक पटल पर चिह्न अंकित करती हैं। तथा इस प्रकार धीरे–धीरे मनुष्य के ज्ञान भण्डार में वृद्धि होती रहती है। आगे लॉक महोदय ने कहा है कि

" ज्ञान की किरणों के द्वारा ही यह अंधेरा कमरा आलोकित होता है। ज्ञान की रश्मियाँ जिन वातायन से भीतर प्रवेश करती हैं, उन्हें संवेदना तथा स्वसंवेदना कहते हैं।"

– जॉन लॉक

लॉक महोदय के उपरोक्त कथन से स्पष्ट है कि बच्चों के सम्मुख जैसा वातावरण व परिस्थिति होगी तद्नुरूप संवेदनाएँ उसके मस्तिष्क पर पडती हैं, जो ज्ञान रूप में परिवर्तित होती हैं। यही ज्ञान आगे चलकर बच्चों के व्यक्तित्व, व्यवहार व कार्य व्यापार को प्रभावित करतें हैं। आगे चलकर अन्य अनुभववादी दार्शनिकों यथा जॉर्ज बर्कले व डेविड ह्यूम ने लगभग इसी तथ्य को स्वीकार किया है। अनुभववादी दार्शनिक जॉर्ज बर्कले ने अनुभव को ही ज्ञान का आधार माना है। बर्कले का प्रसिद्ध कथन हैं " Esseii Percipii " अर्थात सत्ता अनुभवमूलक है। अर्थात अनुभव द्वारा ही वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति होती है। लॉक और बर्कले की भाँति डेविड ह्यूम भी मानते हैं कि हमारे ज्ञान का एक मात्र श्रोत अनुभव है। यहाँ तक कि प्रख्यात समीक्षात्मक बुद्धिवादी दार्शनिक इमानुअल काण्ट ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है। काण्ट मानते हैं कि व्यक्ति को ज्ञान की संवेदनाएं उसके व्यक्तिगत अनुभव द्वारा प्राप्त संवेदनाएं उसकी बुद्धि तक पहुंचती हैं, बुद्धि प्राप्त संवेदनाओं की समीक्षा करके उसे ज्ञान रूप में संचय करती है। ज्ञान प्राप्ति के इस प्रक्रिया से स्पष्ट है कि बालक के जीवन के सभी पक्षों यथा शैक्षिक,सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि का इसके अनुभव व बुद्धि पर तर्कसंगत प्रभाव पड़ता है। स्पष्ट है कि बच्चा जिस परिवेशमें रहेगा वैसा ही अनुभव प्राप्त करेगा। भारतीय परम्परा इस बात का अबाध रूप से पुष्टि करता है। कि भारतवर्ष में बच्चों का रख–रखाव, लालन–पालन आदि कार्य उनकी माताओं द्वारा की जाती है। माता के पास रहकर बच्चा जो भी अनुभव प्राप्त करता है वही उसके मानसिक स्तर में ज्ञान का रूप

धारण करता है। स्पष्ट है कि माता की देख–रेख में बालक जितना अधिक समय व्यतीत करता है, वह उतना ही बच्चे के लिए लाभदायक होता है।

भारतवर्ष की परम्परागत पृष्ठभूमि को देखा जाय तो यहाँ पर बच्चों का लालन–पालन माताओं तथा परिवार के अन्य बुजुर्ग सदस्यों द्वारा किया जाता है। बच्चे अपने पिता के साथ अधिक समय नहीं व्यतीत कर पाते, क्योंकि पिता घर चलाने व जीविकोपार्जन हेतु घरों, गाँवों, जिलों, प्रांतों आदि से दूर दूसरे गाँवों, जिलों,प्रांतों आदि जगह जाकर काम करते हैं। यहाँ तक कि विदेशों में जाकर भी काम करते हैं। घर से उनके कार्यस्थलों की दूरी अधिक होने के कारण वे अपने कार्यस्थ्लों पर अपना आसियाना बनाते हैं जिससे वे अपने घर कभी हफ्ते, महिनों, छः महिनों, वर्ष अथवा उससे भी अधिक समयान्तराल के बाद आतें हैं। ऐसी परिस्थिति में बच्चों से उनकी दूरी बनना स्वभाविक है। वे बच्चों के पल–पल का विकास तथा उनकी सूक्ष्म आवश्यकताओं को नहीं जान पाते। ऐसे में बच्चे अपनी माँ को माँ व दोस्त दोनो ही रूप में देखते हैं और छोटी–छोटी आवश्यकताओं व कमियों को वे अपनी माँ से ही कहना पसन्द करते हैं। ऐसी परिस्थिति में यदि माँ उनके साथ है तो वे सहज अनुभव करते हैं। अपनी माँ से सभी बातें साझा करके वे तनाव, संवेगों, आक्रोश, भय, द्वन्द, कुण्ठा आदि पर नियंत्रण कर पाते हैं। यदि ऐसी परिस्थिति में माँ उनके साथ नही है तो वे अपनी बातों कों छिपाकर कुण्ठा, तनाव, संवेगों पर नियंत्रण नहीं कर पाते और आगे चलकर इन दोषों का शिकार हो जाते हैं। ऐसे में घर से बाहर काम करने वाली महिलाओं के बच्चे प्रभावित हो सकते हैं। बायदर, ब्रुक्सगन जे. (1991) ने अपने अध्ययन में पाया कि कार्यकारी महिलाओं के बच्चों के पहले तीन साल तक मानसिक एवं व्यवहार में परिवर्तनों पर बहुत हानि पहुँचाता है। इसी प्रकार के अध्ययन में डेडिंग तथा अन्य (2007) ने पाया कि पेशेवर माताओं के बच्चों के प्रथम वर्ष में उनके जीवन तथा व्यवहार पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। प्रारम्भिक वर्षों में माताओं की अनुपस्थिति से बच्चे अधिक नकारात्मक रूप से प्रभावित हो सकते हैं। इससे आगे चलते हुए नन्दा और मिनोथा (2007) ने अपने शोध में पाया कि कार्यरत महिलाओं के बच्चे कम सहयोगपूर्ण,सहानुभूति वा लेव असामान्य व्यवहार वाले होते हैं। इन अनुसंधान कार्यों के आधार पर स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त किया जा सकता है कि माताओं की अनुपस्थिति उनके पाल्यों के ऊपर नकारात्मक प्रभाव डालता है जिससे कि उनका व्यक्तित्व व भविष्य अवश्यमेव प्रभावित हो सकता है।

इस संदर्भ में इस बात की आवश्यकता है कि पेशेवर माताओं के पाल्यों (बच्चों) पर उनकी अनुपस्थिति के साथ–साथ उनके परिवार के आकार तथा प्रकार पर भी विवचार किया जाय। अर्थात यदि माता–पिता दोनों कार्यरत हैं तो उनके परिवार का आकार भी बच्चे को प्रभावित कर सकता है । अर्थात एकांकी परिवार तथा संयुक्त परिवार के संदर्भ में यह बात कही जा सकती है कि यदि संयुक्त परिवार है तो माता–पिता की अनुपस्थिति में बच्चों के दादा–दादी, चाचा–चाची, बुआ आदि बच्चों के साथ रहते हैं तो उनका प्रभाव बच्चों पर पड़ता है। इसके विपरीत एकांकी परिवार होने पर बच्चों की स देख–रेख के लिए किसी दाई को रखा जाता है। शुक्ला, सी.एस.(1997) ने पाया कि छोटे परिवारों की तुलना में बड़े परिवारों के बालकों की शैक्षणिक उपलब्धि सार्थक रूप से अच्छी पायी गयी। स्पष्ट है कि परिवार का आकार बड़ा होना बच्चों के पक्ष है अर्थात बड़ा परिवार बच्चों को अधिक सार्थक माहौल प्रदान कर पा रहा है। विक्टोरिया एल्बेफॉक (1998) ने पाया कि छोटे परिवारों की तुलना में बड़े परिवारों के बालकों की शैक्षणिक उपलब्धि सार्थक रूप से अच्छी पायी गयी।

विभिन्न मनोवैज्ञानिकों वैलमैन व कॉफी, स्कील्स व फिलमौर, विलियम्स आदि ने अपने–अपने अध्ययनों से वातावरण की महत्ता को सिद्ध करने का प्रयास किया। इन्होंने स्वीकार किया कि व्यक्ति की बुद्धि वातावरण से सार्थक रूप से प्रभावित होती है। इन मनोवैज्ञानिकों को वैचारिक विश्लेषण से स्पष्ट है कि

माता के संसर्ग का अधिकतम प्रभाव बालकों पर पड़ता है,क्योंकि अपने जन्म की अवस्था से लेकर बाल्यावस्था तक बालक सबसे अधिक अपनी माता के संसर्ग में रहता है।

निष्कर्ष :– वर्तमान समय के बदलते परिवेश,बदलती परिस्थितियाँ, बदलती आवश्यकता आदि ने मानव जीवन की सार्थक रूप से प्रभावित किया है। अधिक से अधिक आधुनिकता के उपभोग की प्रवृत्ति ने मानव की संस्कृति व सभ्यता, विचार, भाव, समझ, बुद्धि, सामाजिकता, आर्थिक परिस्थिति, दृष्टिकोण आदि को प्रभावित किया है। आज प्रत्यैक माता–पिता की असीम चाहत होती है कि वह अपने बच्चों को अच्छे से अच्छे स्कूल में पढा सके जिससे वे (उनके बच्चे) बड़े होकर ऊँचे पदों को सुशोभित कर सकें तथा समाज की मुख्य धारा में शामिल हो सकें। माता–पिता की यह वांछनीयता भारतवर्ष में किसी जाति, धर्म तथा महत्व से कम प्रभावित हो रही है अपितु यह सार्वभौमिक रूप से सर्वत्र स्पष्ट दिखलायी देती है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कभी–कभी केवल पिता की आय अपर्याप्त होती है। ऐसी परिस्थिति में महिलायें भी घर से बाहर निकल कर के पारम्परिक प्रावधान से बाहर निकल कर काम करने लगती हैं। ऐसा करने पर उन महिलाओं को अपने पाल्यों से कुछ समय दूर रहना पड़ता है जिससे बच्चों पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

इस प्रकार के दार्शनिकों एवं मनोवैज्ञानिकों के अनुभव के आधार पर विकसित मानव मस्तिष्क की स्वीकृति अवधारणा से स्पष्ट है कि बालकों पर उनकी माताओं के व्यवहार, रहन–सहन,कार्यअनुभव इत्यादि का अनुकूल प्रभाव पड़ता है। अब आवश्यकता इस बात की है कि माताओं की शिक्षा–दीक्षा, रहन–सहन, जागरूकता आदि अच्छे स्तर का हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

एयर, ए.जे. (1968) : ओंरिजिन ऑफ, प्रैग्मैन्टिज्म, मैक्मिलन एण्ड क0 लि0,
लन्दन,मेलबनै,टोरेंटो

लाल, बसन्त कुमार (23007) : समकालीन पाश्चात्य दर्शन,
मोती लाल बनारसीदास, वाराणसी, 22–67

सिंह, बद्रीनाथ (2009) : पाश्चात्य दर्शन की रूपरेखा,
आशा प्रकाशन, वाराणसी, 223–284

नन्दा और मिनोवा (2007) : कम्परेटिव स्टडी ऑफ द सोशल
बिहेवियर ऑफ नाईन एयर ओल्ड चिल्ड्रन ऑफ वर्किंग एण्ड नॉन
वर्किंग मदर्स